॥ ओ३म् ॥

वेदों में कितने ईश्वर?

लेखक

श्री पं. गङ्गाप्रसाद जी एम. ए.

चीफ जस्टिस, टिहरी गढ़वाल राज्य तथा डिप्टी कलक्टर युक्त प्रान्त,

भूतपूर्व प्रोफेसर मेरठ कालेज तथा प्रधान, आर्य सार्वदेशिक सभा, देहली

(‘धर्म का आदि स्रोत’ के ‘ईश्वर सम्बन्धी विचार’ से सन्दर्भित)

मनु

Scanned with CamScanner

वेदों पर प्रायः ये दोष लगाया जाता है कि वे बहुदेवोपासना, तत्व पूजा और प्रकृति पूजा आदि की शिक्षा देते हैं। यह दोषारोपण सर्वथा न्याय विरूद्ध है। इस मूल का कारण अग्नि, इन्द्र, मित्र, वरूण आदि वैदिक शब्दों के दो भिन्न अर्थों का मिश्रित करना है। वैदिक निर्वचन का यह प्राचीन और सुनिश्चित सिद्धान्त है, जिसका महत्त्व जितना ही अधिक समझा जाय उतना ही अच्छा है कि वैदिक शब्दों के यौगिक अर्थ लिये जाने चाहिये। इस प्रकार वेदों में जो शब्द व्यवहृत हुए हैं उनके दो अर्थ होते हैं और कभी-कभी दो से भी अधिक। उदाहरणार्थ 'इन्द्र' शब्द जो इदि ऐश्वर्य धातु से निकाला है कम से कम तीन अर्थों में प्रयुक्त होता है। कभी उसके अर्थ सूर्य के होते हैं क्योंकि उसका प्रकाश, ऐश्वर्य वा तेज युक्त होता है, कभी उसके अर्थ राजा के होते हैं जिसके अधिकार में संसारिक ऐश्वर्य होता है और कभी-कभी उसके अर्थ ईश्वर के होते हैं जिसका अनुपम ऐश्वर्य है। स्वामी दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में इस विषय की पूर्ण व्याख्या की गई है। उसमें ग्रन्थकार ने ऐसे बहुत से शब्दों के यौगिक अर्थ देकर भली भाँति सिद्ध किया है कि जब वे शब्द उपासना के विषय में प्रयुक्त होते हैं तो उन सबसे सर्वशक्तिमान परमेश्वर का ही बोध होता है। इन शब्दों में से कुछेक को उनके अनेक अर्थों सहित नीचे उद्धृत करते हैः -

1. इन्द्र (इदि, ऐश्वर्य धातु से)

=(1) सूर्य (2) राजा (3) परमेश्वर।

2. मित्र, (मिद, स्नेहने धातु से)

=(1) सूर्य (2) सखा (3) सबका मित्र परमेश्वर।

Scanned with CamScanner

3. वरूण, (वृ-वरणे, ईर्ष्यायाम् धातु से)

=(1) आकाश (2) परमेश्वर जो महान् और सर्वोत्तम है।

4. अग्नि, (अंचु गति पूजनयो धातु से)

=(1) अग्नि या उष्णता जो शीघ्रता पूर्वक गमन करती है, (2) सर्वव्यापक और उपासनीय परमेश्वर।

5. वायु (वा गति गंधनयो धातु से)

=(1) हवा (2) परमेश्वर जो सब से अधिक बलवान् है।

6. चन्द्र (चिदि, आह्लादे धातु से)

=(1) चन्द्रमा जिसे देख सब आनन्दित होते हैं

(2) सर्वसुखों का दाता परमेश्वर।

7. यम (यम उपरमे धातु से)

=(1) राजा (2) सबका शासक।

8. काल, (कल संख्याने धातु से)

=(1) समय (2) परमेश्वर जो सबकी गणना करता है।

Scanned with CamScanner

9. यज्ञ, (यज देव पूजा सङ्गतिकरण दानेषु धातु से)

=(1) उपासना या आहुति देने की प्रक्रिया, (2) परमेश्वर जो पूजा के योग्य है।

10.रूद्र, (रूदिर अश्र विमोचने धातु से)

=(1) राजा जो दुष्टों का दमन करता है, (2) ईश्वर जो दुष्टों को दण्ड देता है।

और भी शब्द हैं जो वेदों में साधारणतया ईश्वर के लिये प्रयुक्त होते हैं, परन्तु पाश्चात्य विद्वान अपने हृदयों पर पुराणों की कथा, वर्त्तमान समय के हिन्दूओं के मिथ्या भ्रम और मूर्ति पूजा का कुप्रभाव पड़ने के कारण बहुधा उन्हें विविध देवताओं के अर्थ में लेते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, शिव प्रसिद्ध शब्द इसी प्रकार के हैं जो हिन्दूओं के देवालय में तीन प्रधान देवताओं के लिये आते हैं। सुविज्ञ पाठकों को यह बताने की आवश्यकता नहीं कि ऐसे विचार वेदों से सर्वथा बाहर हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती उपर्युक्त नामों की निम्न प्रकार व्युत्पत्ति और व्याख्या करते हैः-

ब्रह्मा- (वृहि वृद्धौ धातु से) परमात्मा जो बड़ा है।

विष्णु- विष् (विष्लृ व्याप्तौ धातु से) ईश्वर जो समस्त वस्तुओं में व्यापक हैं।

शिव- (शिव कल्याणे धातु से) ईश्वर जो सब भलाईयों का कारण है।

शंकर- का शब्दार्थ ‘वह जो कल्याण करता है।’

महादेव- का शब्दार्थ ‘देवों में बड़ा’ है।

Scanned with CamScanner

गणेश- का शब्दार्थ 'गणों का स्वामी' है।

ये समस्त शब्द एक ईश्वर का ही बोध कराते हैं। इस बात की पुष्टि देवों की आन्तरिक साक्षी से होती है। हम यहाँ ऋग्वेद का मन्त्र उद्धृत करते हैं।

इन्द्रं मित्रं वरूणमग्निमाहुरथो दिव्यः स सुपर्णो गुरूत्मान्।

एकं सद्विप्राः बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥

ऋग्वेद मं. 1 स. 194 मंत्र 49 ॥

उस एक अविनाशी ब्रह्म को जो दिव्य स्वरूप, उत्तम गुणों से युक्त परमात्मा है विद्वान लोग बहुत से नामों से पुकारते हैं, जैसे इन्द्र (ऐश्वर्य युक्त) मित्र (सब का सखा) वरूण (सर्वोत्तम), अग्नि (सब का उपास्य) यम (सब का राजा) मातरिश्वा (सब से बलवान्) ।

उसी वेद के दूसरे स्थान में हम पाते हैः-

सुपर्ण विप्रा कवयो वचोभिरेकं सन्तं बहुधा कल्पयन्ति।

ऋग्वेद मं. 10 सू. 114 मं.5 ॥

विद्वान् और बुद्धिमान पुरूष अनेक गुण युक्त एक परमेश्वर की सत्ता को अनेक प्रकार से वर्णन करते हैं।

यजुर्वेद में फिर हम पढ़ते हैः-

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद् वायुस्तदु चन्द्रमाः।

तदेव शुक्र तद् ब्रह्म ताआपः स प्रजापतिः ॥

यजुर्वेद अध्याय 32 मं.1 ॥

Scanned with CamScanner

"वह अग्नि(उपासनीय) है, वह आदित्य (नाश-रहित) है, वह वायु (अनन्त बल युक्त) है, वह चन्द्रमा (हर्ष का देने वाला) है, वह शुक्र (उत्पादक) है, वह ब्रह्म (महान्) है, वह आपः (सर्वव्यापक) है, वह प्रजापति (सब प्राणियों का स्वामी) है।"

उपर्युक्त विचार की पुष्टि नीचे लिखी बाह्य साक्षी से भी होती हैः-

कैवल्योपनिषद् में लिखा हैः-

स ब्रह्मा स विष्णुः स रूद्रः स शिवः सोऽक्षरः स परमः स्वराट्।

स इन्द्रः स कालाग्निः स चन्द्रमाः ।।

कैवेल्योपनिषद्

वह ब्रह्म(महान्) है वह विष्णु (सर्वव्यापक) है, वह रूद्र (दण्ड देने वाला) है, वह शिव (सब आनन्द और भलाईयों का मूल) है। वह अक्षर (अविनाशी) है, वह सब से अधिक उच्च और सब से अधिक दीप्तिमान् है, वह इन्द्र (ऐश्वर्यमान) है, वह कालाग्नि (पूजनीय और सब की गणना करने वाला) है, वह चन्द्रमा (आनन्द का देने वाला) है।

फिर मनुस्मृति में लिखा हैः-

प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि।

रूक्मामं स्वप्नधीगम्यं विद्यात्तं पुरूष परम्।।

एतमग्निं वदन्त्येके मनुमन्ये प्रजापतिम्।

इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्मशाश्वतम् ।।

मनु 12-122-23

मनुष्य को चाहिये कि परमेश्वर को जाने, जो सब का शासक, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, प्रकाशयुक्त और केवल ध्यान द्वारा जानने योग्य है। कोई उसे अग्नि (पूजा के योग्य)

Scanned with CamScanner

कोई मनु (मनस्वी) कोई प्रजापति (सब प्रजा का स्वामी) कहता है, कोई उसे इन्द्र (ऐश्वर्यवान्) कोई प्राण (जीवन-मूल) और कोई उसे सनातन ब्रह्म कहता है।

इस विषय में भ्रम फैलाने का सब से अधिक प्रभावपूर्ण कारण 'या' उससे निकले हुए देवता शब्द का अशुद्ध अर्थ है। स्वामी दयानन्द सरस्वती के 'देव' शब्द के शुद्ध अर्थ और विद्वता पूर्ण व्याख्या करके सर्व साधारण को हलचल में डालने से पूर्व, यूरोप में संस्कृत के विद्वानों का यह ढंग था कि वे देवता शब्द का अर्थ सदैव "ईश्वर" किया करते थे। वेदों में बहुत सी वस्तुओं को देव या देवता के नाम से विशेषित किया है। इसलिये यह सहज ही में कल्पना कर ली गई कि वेद अनेक ईश्वरों में विश्वास रखने की शिक्षा देते हैं। समस्त संस्कृत साहित्य में अन्य किसी एक शब्द के अनुवाद ने इस सनातन और महान् धर्म्म के किसी महत्त्वपूर्ण विषय पर इतना भ्रम नहीं फैलाया जितना कि उपर्युक्त शब्द के अनुवाद ने।

देव शब्द दिव प्रकाशने धातु से निकला है अतएव उसका अक्षरार्थ चमकीली या प्रकाश युक्त वस्तु है और इसी कारण उसका गौण व रूढ़ि अर्थ वह वस्तु है जो दिव्य गुण रखती है। इस लिये सूर्य्य, चन्द्र और सृष्टि की अन्य शक्तियाँ अर्थात् अग्नि, वायु आदि के लिये देवता शब्द का प्रयोग किया गया है। हम यजुर्वेद में पढ़ते हैः-

अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रूद्रा देवतादित्या देवता मरूतो देवता विश्वे देवा वृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरूणो देवता।

यजु. 14-20

इस विषय में स्वामी दयानन्द सरस्वती के लेखों ने समस्त विचारों की काया पलट दी है। प्रो. मैक्समूलर अपने एक सब से पिछले ग्रन्थ में अर्थात् India: what can it teach us? में जिसमें स्वामी दयानन्द के विचारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से झलक रहा है। स्वीकार करते हैं। "कोष हमें बतलाते हैं कि देव के अर्थ ईश्वर और देवताओं के हैं

Scanned with CamScanner

निस्सन्देह ऐसा है भी- परन्तु यदि हम वेदों के मन्त्रों में देव शब्द का उल्था सदैव (God) परमेश्वर करें तो वह भाषान्तर न होकर वैदिक कवि के विचारों का रूपान्तर करना होगा। प्रारम्भ में देव के अर्थ 'प्रकाशयुक्त' के थे। अतएव वह निरन्तर आकाश, नक्षत्र, सूर्य, उषा, दिन, वसन्त ऋतु, नदी और पृथ्वी के लिया प्रयुक्त होता था और जब कोई कवि सब वस्तुओं को एक शब्द में जिसे हम सामान्य संज्ञा कहते हैं वर्णन करना चाहता था तो वह उन सब को देव कहता था। ”

वे फिर लिखते हैं- “हमें कभी नहीं भूलना चाहिये कि प्राचीन धार्मिक गाथाओं में जिन्हें हम देवता कहते हैं, वे वास्तविक और जीवित व्यक्ति न थे जिनके विषय में हम कह सकें कि वे ऐसे या वैसे थे। देव जिसका अनुवाद कि हमने ईश्वर किया है केवल गुण वाचक संज्ञा है। वह ऐसे गुणों को प्रकट करता है जो अन्तरिक्ष और पृथ्वी में, सूर्य और नक्षत्रों में उषा और समुद्र में समान हैं अर्थात् प्रकाश। ”

इसलिये हम प्राचीन ऋषियों को केवल इस कारण कि वे ऊपर लिखे भौतिक पदार्तों को देवता के नाम से विशेषित करते हैं बहु ईश्वरवादी अथवा प्रकृतिपूजक नहीं कह सकते। यदि हम ऐसा कहें तो उस मनुष्य को भी ऐसा ही कहना होगा जो सूर्य्य और चन्द्रमा को प्रकास युक्त कहता है अथवा प्रकाशयुक्त आकास या चमकती हुई विजय आदि का वर्णन करता है।

यास्कमुनि जिनकी प्रमाणिकता वेद विषय पर सब से अधिक मानी जाती है और जो वैदिक कोष (निघण्टु) और वैदिक निर्वचन शास्त्र (निरूक्त) के सुप्रसिद्ध कर्त्ता हुये हैं। देव शब्द की व्याख्या और भी अधिक विस्तृत अर्थों में करते हैं।

वे देव शब्द की इस प्रकार निरूक्ति करते हैः-

देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो वा भवति। निरूक्त 7. 15 ।।

Scanned with CamScanner

जो हमें किसी प्रकार का लाभ पहुँचाता है, जो वस्तुओं को प्रकाशित कर सकता है या उन पर प्रकाश डाल सकता है और जो प्रकाश का मूल स्त्रोत (वा स्थान) है वह 'देव' है।

अतएव देव शब्द अनेक और वस्तुओं के लिये प्रयुक्त होता है। हम यहाँ उसके कुछ विशेष अर्थों का उल्लेख करते हैः-

(1) वह माता पिता के लिये व्यवहृत होता है क्योंकि वे हमको असीम लाभ पहुँचाते हैं। तैत्तिरीयोपनिषद् में माता, पिता, आचार्य देव कहे गये हैः-

मातृदेवो भव पितृदेवो भव आचार्य्य देवो भव। तैत्तिरीय उपनि. अनु. 11 ।।

(2) वह विद्वान् के लिये भी आता है क्योंकि अनेक आत्मा प्रकाश युक्त होते हैं, और वे अनेक बातों पर प्रकाश डालते हैं। शतपथ ब्राह्मण में लिखा है "विद्वां सोहि देवाः"- विद्वान् पुरूष देवता है।

(3) उसका इन्द्रियों के लिये भी प्रयोग किया जाता है, क्योंकि उनके द्वारा हमें भौतिक (दृश्यमान) जगत का ज्ञान होता है। उदाहरणार्थ यजुर्वेद में लिखा है।

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद् देवा आप्नुवन् पूर्व मर्षत्।यजु. अ. 4 मं. 4 ।।

परमेश्वर एक है वह गतिशील नहीं तथापि उसकी गति मन से भी अधिक है। यद्यपि वह पूर्व से ही इन्द्रियों में है तथापि इन्द्रियाँ (देव) उस तक नहीं पहुँच सकतीं। फिर मुण्डकोपनिषद् में पढ़ते हैः -

न चक्षुषा गृह्यते नापि वाता नान्यर्देवस्तपसा कर्मणा वा। ज्ञानप्रसादेन विशुद्ध सत्त्वस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः।।मुण्डक 2 । 8 ।।

Scanned with CamScanner

परमेश्वर नेत्र या वाणी अथवा अन्य इन्द्रियों (देवों) के द्वारा नहीं जाना जाता और न तप वा कर्मों से प्राप्त होता है। प्रत्युत जो मनुष्य विशुद्ध भाव से उसका ध्यान करता है वह ज्ञान की शान्त ज्योति से उसका दर्शन करता है।

(4) हमारे पाठकों में से बहुत से इस बात को जानते होंगे कि प्रत्येक वैदिक मन्त्र का देवता होता है। यूरोपीय विद्वान् इससे उस देवता विशेष का अर्थ लेते हैं जिसे उस मंत्र में सम्बोधित किया गया है। विविध मन्त्रों के विविध देवता होने के कारण यह कल्पना कर ली गई है कि वैदिक ऋषि बहुत से देवताओं को पूजने और सम्बोधन करने वाले थे परन्तु यह बहुत बड़ी भूल है।
यास्कमुनि कहते हैः

अथातो दैवतं तद्यानि नामानि प्राधान्यस्तुतीनां देवतानां तद्दैवतमित्याचक्षते। सैषा देवतोपपरीक्षा यत्काम ऋषिर्यस्यां देवतायामर्थ पत्यमिच्छन् स्तुतिम् प्रयुक्ते तद्दैवतः स मन्त्रो भवति।। निरूक्त 7 । 1 ।।

इसका यह भावार्थ है कि मंत्र के देवता से उस विषय का ग्रहण करना चाहिये जिसकी उसमें व्याख्या की गई है। "India_ what can it teach us?" नामक पुस्तक में जिससे हम पूर्व भी उदाहरण दे चुके हैं। प्रो. मोक्षमूलर स्वीकार करते हैं कि – "उन वस्तुओं को जिनका वर्णन वैदिक मन्त्रों में किया गया है देव या देवी कहते हैं तो हमें एक प्राचीन हिन्दू धर्म वेत्ता (प्रकट रूप से उनका अभिप्राय यास्कमुनि से है) की बात स्मरण रखनी चाहिये कि मंत्र के देवता से निर्वाचित विषय के अतिरिक्त और कुछ अभिप्राय नहीं।"

(5) देव शब्द परमेश्वर के लिये भी आता है, जो सब वस्तुओं का प्रकाशक, समस्त प्रकाश और ज्ञान का मूल स्रोत और उन सब वस्तुओं का प्रदाता है जिनका हम संसार में उपभोग करते हैं, परन्तु उसका अर्थ सदैव ईश्वर ही नहीं होता। वस्तुतः जैसा कि प्रोफेसर मोक्षमूलर मानते हैं देव शब्द वस्तु वाचक

नहीं प्रत्युत गुणवाचक है। अतएव इसका प्रयोग उन समस्त वस्तुओं के लिए हो सकता है जिसमें उसके निर्वाचित गुण पाये जाते हैं जैसे प्रकाश, लाभ पहुँचाना, चमकाना, अथवा किसी वस्तु पर प्रकास डालना आदि।

अब पाठक गण देख सकेंगे कि यदि पुराने आर्य्य लोग सूर्य, चन्द्र, आकाश, समुद्र, पृथ्वी, अन्तरिक्ष को देवता कहते थे तो इससे यह न समझना चाहिये कि वे उन्हें ईश्वर मानते थे अथवा उनकी पूजा करते थे। ये सब तथा बहुत सी और भी वस्तुएं ईश्वर के समान देवता के अर्थों के अन्तर्गत आ जाती हैं, परन्तु इन सब में से केवल एक ईश्वर ही पूजने के योग्य है। यजुर्वेद स्पष्ट रीति से कहता हैः-

वेदाहमेतं पुरूष महांतमादित्यवर्ण तमसः परस्तात्। तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।। यजुर्वेद 31 । 18 ।।

हम उस परमात्मा को जाने जो पूर्ण प्रकाश स्वरूप और अन्धकार से परे है। केवल उसी का ज्ञान प्राप्त करके मनुष्य मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकता है। इसके अतिरिक्त मुक्ति का दूसरा मार्ग नहीं है।

शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट और जोरदार शब्दों में बतलाया गया हैः-

योऽन्यां देवतामुपासते न स वेद यया पशुरेव सदेवाम्।।

शतपथ ब्राह्मण का. 14 अ. 4

जो किसी दूसरे देवता की पूजा करता है वह नहीं जानता , वह विद्वानों के मध्य पशुवत् है।

हम यहाँ ऋग्वेद से कुछ मन्त्र उद्धृत करते हैं जिनसे प्रकट होगा कि वेद में कितनी स्पष्ट और युक्त संगत रीति से विशुद्ध और पूर्ण ईश्वर वाद की शिक्षा दी गई हैः-

Scanned with CamScanner

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथ्वीं द्यामुतेमां कस्मैदेवाय हविषा विधेम।। 1 ।।

य आत्मादा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।

यस्यच्छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।2 ।।

यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो वभूव।

य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम।। 3 ।।

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसयां सहाहुः ।

यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहु कस्मैदेवाय हविषा विधेम ।। 4 ।।

येन द्यौरूग्रा पृथ्वी च दृढ़ा येन स्वः स्तभितं येन नाकः।

योऽन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मैदेवाय हविषा विधेम।। 5 ।।

यं क्रन्दसी अवसातस्पभाने अभ्यैक्षेतां मनसारेजमाने ।

यत्राधिसूर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम ।। 6 ।।

आपोह यद् वृहतीविश्वमायन् गर्भं दधानाः जनयन्तीरग्निम्।

ततो देवानां समवर्त्ततासुरेकः कस्मैदेवाय हविषा विधेम।। 7 ।।

यश्चिदाषो महिनापर्य पश्यद् दक्षं दधानाः जनयन्तीर्यज्ञम्।

यो देवानामधिदेव एक आसीत् कस्मैदेवाय हविषा विधेम।। 8 ।।

मानोंहिंसीज्जनिता यः पृथिव्या यो वा दिवम् सत्यधर्माजजान।

यश्चापश्चन्द्रा वृहतीर्जजान कस्मैदेवाय हविषा विधेम।। 9 ।।

Scanned with CamScanner

प्रजापते न स्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव।

यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयोरयीणाम् ।। 10 ।।

ऋ. वे. मं. 10 सू. 12 मं. 1-10 ।।

आरम्भ काल में ईश्वर था जो प्रकाश का मूल है। अखिल विश्व का वही एक स्वामी था। उसी ने पृथ्वी और आकाश को स्थिर कर रक्खा था। वही है जिसकी हमें प्रार्थना करनी चाहिये।

जो आत्मिकज्ञान और बल का देने वाला है, संसार जिसकी पूजा करता है, जिसकी आज्ञा का पालन सब विद्वान् लोग करते हैं, जिसकी शरण अमरत्व है, जिसकी छाया मृत्यु है उसी देव की हम उपासना करें। 2 ।

जो अपनी महत्ता के कारण इस चराचर जगत् का एक मात्र राजा है, जो दुपाये और चौपाओं का उत्पादक और स्वामी है उसी देव की हम उपासना करें।

हिमवान पर्वत और जल से भरे समुद्र जिसके महत्व की घोषणा करते हैं, ये दिशाऐं जिसकी भुजा हैं उसी देव की हम उपासना करें।

जिसने इतने बड़े आकाश को धारण किया हुआ है, और पृथ्वी को अचल कर रक्खा है, जिसके द्वारा स्वर्ग और मोक्ष स्थित हैं जो समस्त अन्तरिक्ष में अपने आत्मबल से व्याप्त हैं, उसी देव की हम उपासना करें।

जिसकी ओर पृथ्वी और अन्तरिक्ष देखते हैं क्योंकि वे उसी की रक्षा में स्थित और उसी की इच्छा से परिचालित होते हैं जिसमें सूर्य उदय होता और चमकता है उसी देव की हम उपासना करें।

Scanned with CamScanner

जिस समय इस विस्तृत प्रकृति वा उपादान कारण ने जो अग्नि दशा में था तथा जो विश्व को अपने गर्भ में धारण किये था- अपने आप को प्रकट किया उस समय वही समस्त प्रकाशवान् पदोर्थों (देवों) का जीवन था उसी देव की हम उपासना करें।

जिससे अपनी महत्ता से उस फैले हुये उपादान कारण को जिसमें उष्णता और शक्ति धारण की हुई थी और जिससे यह सृष्टि प्रादुर्भूत हो रही थी , जो समस्त प्रकाश युक्त पदार्थों (देवों) का एक मात्र "अधिदेव" है उसी देव की हम उपासना करें।

जो पृथ्वी का उत्पादक है और जिस सत्य नियम वाले ने आकाश को भी पैदा किया है और जिसने विस्तृत और प्रकाश युक्त उपादान का प्रादुर्भाव किया है , वह हमें दुःख न पहुंचावे , उसी देव की हम उपासना करें।

हे विश्व के स्वामी! तेरे अतिरिक्त इन उत्पन्न हुए पदार्थों को वश में रख कर शासित करने वाला कोई दूसरा नहीं है जिन वस्तुओं की कामना में हम तेरी उपासना करते हैं यह हमारी हों और हम संसार के समस्त उत्तम पदार्थों के स्वामी हों।

इन दस मन्त्रों में "एक" शब्द चार बार से कम व्यवहृत हुआ। यदि पाठक गण ईश्वर के अद्वितीय होने में इससे अधिक स्पष्ट, असंदिग्ध, सुन्दर और प्रौढ़ वर्णन की खोज दूसरे धर्म ग्रन्थों में करेंगे तो खोज निष्फल होगी।

जब कभी वेदों या उपनिषदों के एक या दो वाक्य जिन में ईश्वर एकत्व का वर्णन होता है, पाश्चात्य विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत किये जाते हैं तो वे झट कह उठते हैं कि ये 'अद्वैतवाद' की शिक्षा देतें हैं, एक ईश्वरवाद की नहीं और इनका अर्थ यह है कि केवल एक ईश्वर है दूसरी कोई वस्तु नहीं , यह नहीं है कि परमेश्वर एक है दूसरा परमेश्वर नहीं अर्थात् ऐसे वाक्यों का अभिप्राय अद्वैतवाद एक है। परक ईश्वरवाद परक नहीं। हमें खेद है कि ग्रन्थ के प्रकृत विषय से हम अधिक दूर नहीं जा सकते। हम इस बात का निर्णय पाठकों के ऊपर छोड़ते हैं कि इन मन्त्रों को जिनमें परमेश्वर को विश्व का विधाता और स्थिर रखने वाला, समस्त विश्व का एक मात्र राजा स्वर्ग को व्यवस्थित रखने वाला,

Scanned with CamScanner

अमरत्व का प्रदान करने वाला और हमारी पूजा के योग्य वर्णन किया गया है। किसी प्रकार भी अद्वैतवाद की शिक्षा देने वाला समझा जा सकता है? अब हम अथर्ववेद के कुछेक मन्त्रों को प्रो. मोक्षमूलर के भाष्य सहित नीचे उद्धृत करते हैः

वृहन्नेषामधिष्ठाता अन्तिकादिव पश्यति।

यस्तायन् मन्यते चरन् सर्व देवा इदे विदु ः।। 1 ।।

यस्तिष्ठति चरति यश्च वञ्चति योनिलायम् चरति यः प्रतङ्कम्।

द्वौ संनिपद्य यन्मन्त्रयेते राजा तद्वेद वरूणस्तृतीयः ।। 2 ।।

उतेयं भूमिर्वरूणस्य राज्ञ उतासौ द्यौर्वृहती दूरे अन्ता।

उतो समुद्रो वरूणस्य कुक्षी उत्तास्मिन्नल्प उदके निलीनः।। 3 ।।

उत यो द्यामतिसर्पति परस्तान्न समुच्यातै वरूणस्य राज्ञः।

दिवस्पर्शः प्रचरन्ति दमस्य सहस्राक्षा अति पश्यन्ति भूमिम्।। 4 ।।

सर्वं तद्राजा वरूणो विचष्ट यदन्तरा रोदसी यत् परस्तात्।

संख्याता अस्य निमिषो जनाना मक्षानिवस्वनघ्नी निमिनोति तानि।। 5 ।।

येते पाशा वरूण सप्त सप्त त्रेधा तिष्ठन्ति विपितारू शन्तः।

छिनन्तु सर्वे अनृतम् वदन्तः यः सत्य वाद्यति तं सृजन्तु ।।6 ।।

अथर्व. का. 4 सू. 16 ।।

इन सब का अधिष्ठाता वरूण ऐसे देख रहा है, मानो वह समीप है, यदि कोई मनुष्य खड़ा होता है, चलता है, छिपता है, या लेटने को जाता है, वा उठता है या दो मनुष्य

Scanned with CamScanner

परस्पर कानाफूसी या मन्त्रणा करते हैं तो राजा वरूण उसे जानता है, वह तीसरा वहाँ उपस्थित है। 1-2

यह पृथ्वी तथा विस्तृत आकाश जिसके सिरे बहुत दूर हैं राजा वरूण के अधिकार में है। दोनों समुद्र (आकाश और समुद्र) वरूण की कुक्षी हैं और वह पानी के इन छोटे से बिन्दू में भी व्याप्त है।

यदि कोई पुरूण आकाश से भी बहुत परे भाग जाय तो भी वह राजा वरूण से नहीं बच सकता। 3।

उस के गुप्तचर आकाश से संसार की ओर आते हैं और सहस्त्रों नेत्रों से इस पृथ्वी पर दृष्टिपात करते हैं। 4।

राजा वरूण उन सब को देखता है जो आकास और पृथिवी के मध्य में है। आकाश इनसे भी परे है। उसने मनुष्यों के नेत्रों के पलक मारने की भी गणना कर ली है। खिलाड़ी के पांसा फैंकने के समान उसने समस्त वस्तुओं को अखण्ड रूप से स्थित कर रखा है। 5।

हे वरूण! तेरे भयानक पाश जो सात सात और तीन-तीन करके फैले हुए हैं मिथ्यावादियों को फांस लें और सत्य बोलने वालों को छोड़ देते हैं। 6।

अब यह स्पष्ट हो गया कि वेद विशुद्द और पूर्ण एक ईश्वरवाद की शिक्षा देते हैं जो अद्वैतवाद के सिद्धान्त से उतनी ही भिन्न है जितनी वह ईश्वर के मानने वाले दूसरे धर्मों (विशेषतः सैमीटिक Semitic अर्थात् यहूदी, ईसाई और मुहम्मदी मतों) के ईश्वरवाद से।

Scanned with CamScanner

33 देवता

हमारे कुछेक पाठकों ने वेदों के 33 देवताओं के सम्बन्ध में सुना होगा कि जब भारतवर्ष में अवनत होते हुये वैदिक धर्म ने बहु ईश्वरवाद का स्वरूप धारण कर लिया तो कदाचित् ये 33 देवता ही बढ़ते-बढ़ते हिन्दू देवालय के 33 कोटि देवता बन गये। वेदों के 33 देवता क्या थे? क्या वे ईश्वर थे? कदापि नहीं। पण्डित गुरूदत्त की Terminology of the Vedas नामक पुस्तक में जो इस विषय की व्याख्या की गई है वह इतनी स्पष्ट और सुन्दर है कि हम उसका विस्तार पूर्वक यहाँ अनुवाद देते हुये क्षमा याचना की आवश्यकता नहीं समझते।

हम देख चुके हैं कि यास्क मुनि उन चीजों के नामों को (मंत्रों का) देवता कहते हैं, जिनके मंत्रों में वर्णित हैं तो फिर देवता क्या पदार्थ हैं? वे समस्त वस्तुएँ जो मानवी ज्ञान का विषय हो सकती हैं, मनुष्य का सारा ज्ञान देश और काल इन दो बातों से घिरा हुआ है। हमारी कारण कार्य अभिज्ञता विशेषतः घटनाओं का क्रम, यह क्रम क्या है? केवल समय में घटनाओं का नियम से संगठित होना फिर हमारा ज्ञान किसी वस्तु का ज्ञान होना चाहिये उस वस्तु के लिये किसी स्थान का होना आवश्यकीय है। इस प्रकार हमारे ज्ञान की परिस्थिति देस और काल हैं। अब ज्ञान के आवश्यकीय अंगों के सम्बन्ध में विचार करते हैं। ज्ञान के सब से अधिक विस्तृत भेद आन्तरिक और बाह्य है। जो कुछ मनुष्य देह के बाहर घटित होता है उसका ज्ञान बाह्य-ज्ञान कहलाता है। यह दृश्यमान जगत् के विभव का ज्ञान है। विज्ञान वेत्ता लोग इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि प्राकृतिक विज्ञान अर्थात् भौतिक जगत का विज्ञान दो वस्तुओं के अस्तित्व को प्रकट करता है- (1) प्रकृति वा उपादान कारण और (2) शक्ति, उपादान कारण का हमें स्वयमेव बोध नहीं होता। हम प्रकृति में केवल शक्ति के प्रकाश को देखते हैं, जिनसे, प्रत्यक्ष ज्ञात होता है। इस प्रकार बाह्य जगत का ज्ञान शक्ति और उसके परिवर्तनों का ज्ञान रह जाता है। अब हम आन्तरिक ज्ञान की ओर आते हैं। आन्तरिक ज्ञान का उल्लेख करने से पूर्व

Scanned with CamScanner

मनुष्य की आत्मा जो चेतन सत्ता है। दूसरे आन्तरिक भाव जिनका माननीय आत्मा को ज्ञान होता है, आन्तरिक भाव दो प्रकार के हैं। वे या तो आत्मा के स्वाधीन और ज्ञान कर्म वा ऐसे कर्म हैं जिनका उसे स्वयम् ज्ञान होता है और इसलिये जिन्हें हम चेष्टित कर्म कह सकते हैं, अथवा शरीर के ऐसे कर्म हैं जो आत्मा के शरीर में उपस्थित रहने से प्रादुर्भूत होते हैं। अतएव उन्हें ह म जीवन सम्बन्धी कर्म वा प्राण नाम से पुकार सकते हैं।

इस लिये ज्ञेय पदार्थों का (a priori) विश्लेषण हमें 6 बातों की ओर ले जाता है- काल, देश, शक्ति, आत्मा, प्राण और चेष्टित कर्म, ये वस्तुएँ देवता कहाने योग्य हैं। उपर्युक्त गणना से हमें यह परिणाम निकालना चाहिये कि निरूक्त में लिखा हुआ वैदिक देवताओं का ज्ञान यदि वास्तव में सत्य है तो हमें वेदों में काल, देश, शक्ति, आत्मा, प्राण और चेष्टित कर्म इन 6 बातों का देवताओं के रूप में समावेश मिलना चाहिये अन्य किसी का नहीं। आओ इस कसौटी से परीक्षा करेः-

नीचे लिखे मंत्रों में हम 33 देवताओं का वर्णन पाते हैः-

त्रयस्त्रिं शंतास्तुवत भूतान्यशाम्यन् प्रजापतिः परमेष्ट्याधिपतिरासीत्। यदुर्वेद 14 । 31

यस्य त्रयस्त्रिशंद्देवा अंगे गात्राविभेजिरे। तान्वै त्रयस्त्रिं शद्देवा नेके ब्रह्मविदो विदुः । अथर्व. 19 । 4 । 27

सबका स्वामी, विश्व का नियन्ता, सब को स्थिर रखने वाला 33 देवताओं द्वारा सब वस्तुओं को ग्रहण किये हुये हैं ।। 1 ।। सच्ची ब्रह्म विद्या को जानने वाले 33 देवताओं को मानते हैं जो अपने-अपने कर्मों को यथा विधि करते हैं।

अब हम विचार करते हैं कि ये 33 क्या हैं, जिससे हम अपनी पूर्व विवेचना से तुलना कर सकें और इस समस्या की पूर्ति कर सकें।

शतपथ ब्राह्मण में लिखा है-

Scanned with CamScanner

सहोवाच महिमान एवैषामेते त्रयस्त्रिंशच्वेव देवाहति। कतमे ते त्रयस्त्रिं शदित्त्यष्ठौ वसव एकादश रूद्रा द्वादशादित्यास्ता एक-त्रिंशदिन्द्रश्चैव प्रजापतिश्च त्रयस्त्रिं शाविति ।।3।। कतमे वसव इति। अग्निश्च पृथिवी च वायुश्चान्तरिक्षं चादित्यश्च द्यौश्च चन्द्रमाश्च नक्षत्राणि चेते वसव एतेषु हीदं सर्व वसुहित मेते हीदं सर्वं वासयन्ते तद्यदिदं सर्व वासयन्ते तस्माद्वसव इति।।4।।

कतमे रूद्रा इति। दशेमे पुरूषे प्राणा आत्मैकादशस्ते यदास्मान् मर्त्याच्छरीरादुत्क्रामनत्यथ रोदयन्ति तद्यद्रोदयन्ति तस्माद्रुदा इति।5।।

कतम आदित्या इति। द्वावश मासाः संवत्सर स्यैता एते हीदं सर्वमाददानायन्ति तद्यदिदं सर्व माददानायन्ति तस्मादादित्या इति।।6।। कतम इन्द्रः कतमः प्रजापति रिति। स्तन यित्नुरेवेन्द्रों यज्ञः प्रजापतिरिति। कतमः स्तनयित्नु रित्यशनिरिति कतमो यज्ञ इति पशव इति।।7।।

कतमे ते त्रया देवा इतीम एव त्रयो लोका एषु हीने सर्वे देवा इति। कतमौ द्रौ देवा वित्यन्नं चैव प्राणश्चैति। कतमो अघ्यर्घ योऽयं पवते।।8।।

तदाहुः यदयमेक एव पवतेऽथ कथ मघ्यर्घ इति यदस्मिन्निदं सर्व मघ्याघ्नोंत्तेनाघ्यर्घ इति। कतम एको देव इति स ब्रह्मत्य दित्या चक्षते। शतपथ पृ. 14, 16

(देखो स्वामी दयानन्द सरस्वती की ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पृष्ठ 66)

उपर्युक्त वचनों का अर्थ है कि याज्ञवल्क्य शाकल्य से कहते हैं- कि ये 33 देवता परमेश्वर की महिमा का प्रकाश करते हैं। 8 वसु 11 आदित्य, इन्द्र और प्रजापति मिल कर सब 33 हुये। 8 वसु ये हैं- अग्नि, पृथ्वी, वायु, अन्तरिक्ष, आदित्य, द्यौ, चन्द्रमा, शरीर और नक्षत्र। ये वसु इसलिये कहाते हैं कि सब पदार्थ इन्हीं में बसते हैं और समस्त जीवित, गतिशील, और सत्तात्मक पदार्थों के निवास स्थान हैं।

Scanned with CamScanner

रूद्र 11 हैं, 12 प्राण जो मनुष्य की देह को जीवित रखते हैं और ग्यारहवाँ आत्मा ये रूद्र कहलाते हैं क्योंकि जब वह शरीर का त्याग करते हैं तो वह मृतक हो जाता है और मृतक के सम्बन्धी प्राण निकल जाने के कारण रोते हैं। 12 आदित्य 12 सौर्य मास हैं जो समय की गति का परिणाम बताते हैं, उन्हें आदित्य इस लिये कहते हैं कि वे अपनी गति से समस्त पदार्थों में परिवर्तन कर देते हैं और इसी लिये उनके द्वारा प्रत्येक वस्तु की अवधि समाप्ति करते हैं। इन्द्र सर्वव्यापक विद्युत् या शक्ति का नाम है। प्रजापति यज्ञ है (अर्थात् मनुष्य का विविध पदार्थों को शिल्प कला सम्बन्धी उद्देश्य पूर्ति के लिये इच्छापूर्वक एकत्र करना अथवा अन्य पुरूषों के साथ अध्ययन वा अध्यापन के लिये सहयोग करना) उसके अर्थ पशु (उपयोगी जानवरों) के भी हैं। यज्ञ और उपयोगी पशु प्रजापति इस लिये कहाते हैं कि ऐसे कार्यों और पशुओं से ही संसार साधारणतया अपनी स्थिति की सामग्री ग्रहण करता है। शाक्लय ऋषि पूछते हैं कि 3 देवता कौन से हैं। याज्ञवल्क्य जी उत्तर देते हैं कि वे तीन लोक हैं (अर्थात् स्थान, नाम, और जन्म) उन्होंने पूझा कि दो कौन से हैं। याज्ञवल्क्य ने कहा कि प्राण (संयोजक पदार्थ) और अन्न (विभाजक पदार्थ)। वह पूछते हैं अध्यर्द्ध क्या है? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं कि वह विश्व की पालन करने वाली विद्युत है, जो संसार की स्थिति स्थिर रखती तथा सूत्रात्मा कहाती हैं। अन्त में उन्होंने पूझा कि एक देव कौन सा है? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं कि एक उपासनीय परमेश्वर है।

इन 33 देवताओं का वेदों में वर्णन है। अब हमें यह देखना चाहिये कि यह व्याख्या हमारी पूर्व कृत विवेचना से कहाँ तक मिलती है। शतपथ के गिनाये हुए 8 वसु स्पष्च रूप से स्थानों (वा देश) के नाम हैं। 11 रूद्रों में प्रथम आत्मा है और दूसरे 10 प्राण हैं। 12 आदित्यों में काल आ जाता है। विद्युत् वह शक्ति है जो सब में व्याप्त है और प्रजापति (पशु और यज्ञ) में साधारण दृष्टि से आत्मा चेष्टित कर्मों को सम्मिलित मान सकते हैं।

Scanned with CamScanner

इस प्रकार 33 देवता हमारी स्थूल विवेचना के 6 तत्वों से मिल जाते हैं, क्योंकि यहाँ विस्तार की यथार्थता दिखाने से हमारा अभिप्राय नहीं है जितना साधारण समानताओं का दिखाना इष्ट है। अतएव आंशिक भेद त्यागा जा सकता है।

डाक्टर हाग कहते हैं कि "वेदों के इन 33 देवताओं की जन्दावस्ता (यास 1 । 30) के 33 रतुओं से तुलना की जा सकती है। एक और स्थान पर डा . हाग लिखते हैं कि – वेद और जन्दावस्ता के देवताओं की गणना के सम्बन्ध में अत्यन्त आश्चर्य जनक समानता पाई जाती है।"

जन्दावस्ता से यह प्रकट नहीं होता कि पारसी लोग 33 देवताओं के यथार्थ को जानते थे डाक्टर हाग इस बात को स्वीकार करते हुए लिखते हैं कि जन्दावस्ता में उनके पृथक् पृथक् भेदों के अनुसार उन्हें प्रकट रूप से नहीं गिनाया गया, जैसा वेदों में 33 देवताओं को गिनाया गया है। अतएव हम कुछ निश्चय के साथ यह परिणाम निकाल सकते हैं कि 33 रतु ईश्वरीय सत्ताओं की गिनती करने के लिये केवल एक वाक्य रह गया था, जो प्राचीन होने के कारण पवित्र समझा गया और जिसके प्रयोग तथा वास्तविक अर्थ ईसाईयों को ब्राह्मणों से पृथक् होने के पश्चात् नहीं ज्ञात रहे।

('धर्म का आदि स्रोत' के 'ईश्वर सम्बन्धी विचार' से सन्दर्भित)

॥ ओ३म् ॥

Scanned with CamScanner